श्री:

वन्दना

मनसा चक्षुषितं यद्वत्
स्फुलिंगो न प्रकाशते ।
स एवेक्षत-प्रमादेन
सृष्टो दाहं तनोति च ॥ १ ॥

तथैकाग्रातितो यस्य
सत्त्वेन विकासिनीम् ।
शक्तिं च तेजसो गुप्ताम्
कीर्त्तिदेवेह नेत्यहो ॥ २ ॥

पीयूषवर्षिणी वाणी
ससरसा काव्यचातुरी ।
सनैतोभद्रपाण्डित्यम्
'प्रात्मगुप्ति' विशेषतः ॥ ३ ॥

यो ऽसौ दिव्यगुणो
विद्वच्चूरण्ये समर्चितः सताम् ।
शाश्वच्छ्रुतः
प्रकाशीत कोऽपि ~~अमलप्रभो~~
खिद्यो
मेघो विद्याधरो ऽधुना ॥ ४ ॥

तं वन्दे ज्ञानिनामग्र्यम्,
शैलाचार्यं महौजसम् ।
तपस्विनं सदाचारं, ~~विद्वांसं~~
पुण्यश्लोकं सुधीवरम् ॥ ५ ॥

अमृतलाभवाचार्यम्,
परमानन्द रूपिणम् ।
स्थितप्रज्ञं महात्मानम्
शक्ति भक्ति समन्वितम् ॥ ६ ॥

प्रथम दर्शन

यह दिसम्बर १९२८ की बात है। मैं उन दिनों पंजाब विश्वविद्यालय के अन्तर्गत चलनेवाली 'प्राज्ञ' परीक्षा के प्रथम द्वितीय वर्ष में श्रीनगर में संस्कृत पढ़ता था। सर्दी की छुट्टियों के अवसर के दिन थे, मैं अपने घर 'मतिठ' आया था। मेरे पूज्य मामा जी - श्री पं. नन्दलाल जी रैना - जो श्रीनगर के एस. पी. एस. हाईस्कूल में अध्यापक थे - ने मुझे कहा कि मेरे पास आजकल एक ब्रह्मचारी जी ठहरे हुए हैं। वह संस्कृत के बड़े विद्वान हैं तुम उनके दर्शन करने आजाओ। मामा जी का घर 'मतिठ' के जिवन कुंड के पास ही था, वहां उन दिनों बिल्कुल कुंडों के (कमल, विमल, दो कुंड) के समीप

जो लिखित मौनी बाबा की
धर्मशाला कहलाती थी।

ही एक धर्मशाला थी।[1] उसी के एक कमरे में सुबह-शाम को रहते थे और प्रातः सायं सामूजी के यहाँ भोजन करने आते थे। संभवतः पौजहत्तर वर्ष था। दिन के ९ बजे के लगभग का समय था। श्री जी आगये। उस समय इन की आयु मेरे विचार में तीस और पचीस के बीच में थी। छोटा कद, गोरा शरीर, तेजस्वी चेहरा, गोरवर्ण, हल्की दाढ़ी और हल्की सी मूंछें, काले और घुँघराले बाल, बड़ी और कुछ अंदर धसी आँखें, दाहिनी ओर कुछ तिरछी दृष्टि। मैंने प्रणाम किया। मुझ से पूछा कहाँ पढ़ते हो? तब मैंने कहा मैं प्रेमी में पढ़ता हूँ। उन्होंने कहा कौन से ग्रन्थ तक पढ़ते हो। मैंने

पृष्ठ २. यह धर्मशाला कहलाती थी। इस को मौनी बाबा की धर्मशाला कहते थे। यह चिरलकुण्ड के दायें तरफ थी।

नाम बता दिया। मेरे हाथ में महाकवि कालिदास का 'विक्रमोर्वशीयम्' नाटक था। उस का प्रारम्भिक पद्य "वेदान्तेषु यमाहुरेकपुरुषं व्याप्यस्थितं रोदसी" पढ़ने को कहा। मैंने पढ़ा और हिन्दी भी सुनाया। उन्होंने पूछा 'वेदान्तेषु' का क्या अर्थ है। मैंने उस समय जो समझा था बता दिया। फिर और भी बातें हुईं। इस के बाद हमारा नहीं रोज इन के पास आने का क्रम रहा। मुझे इन के संस्कृत पद्यों को पढ़ने की शैली बहुत मधुर लगी। यद्यपि मैं उस समय कुछ विशेषरूप से यह जानता नहीं था परन्तु इन के अन्दर संस्कृत का इन्मग्न की ज्ञानगरिमा का प्रभाव झलक पड़ता था।

उन दिनों 'श्री' जी दोनों समय भोजन करते थे। 'प्रदोष' व्रत रखते थे[1] उस दिन स्वयं भोजन अपने हाथों पकाते थे और मौन व्रत रखते थे। प्रदोष के दिन मैं उनके पास ही रहता था क्योंकि यदि उन को कुछ कहना होता था या किसी वस्तु की आवश्यकता होती थी तो मुझे यों संकेतों से बताते थे या लिख कर देते थे।

मैं शिवरात्रि कर के श्रीनगर चला गया। श्रीजी... को मैंने प्रार्थना की थी कि वह जब श्रीनगर पधारेंगे तो मेरे पास अवश्य पधारें या मुझे सूचित करें।

'मतिज' में पण्डित शिवजी फोतेदार नामक एक ~~सज्जन~~ सज्जन व्यक्ति रहते थे वह ~~तत्कालीन आवश्यक~~ तत्कालीन ~~सरकारी जनविभाग~~ जम्मू कश्मीर गवर्नमेंट के फारिस्ट विभाग में एक सिविल पदाधिकारी थे।

---

1 यह व्रत 'श्री' जी कई वर्षों तक करते रहे और हज्ज होने के बाद वर्ष ४० तक से नहीं रहा।

इन के साथ महात्मा जी (भगीजी) का साक्षात्कार नहीं हुआ था। उनका एक पुत्र श्री जियालाल है जो अब भी मांडी में रहते हैं और वैद्य हैं। परन्तु अब रिटायर्ड हैं। वह भी महात्मा जी के अत्यन्त स्नेहपात्र और सेवक थे। पण्डित शिवजी महात्माजी को परम श्रद्धेय मानते थे। महात्माजी उन को पुरुषोत्तम का अपना पिता मानते थे।

उन दिनों महात्मा जी अलंलागा तहसील में अवस्थित गौतमनाग, अलंलागुंगा (तीर्थ नागलला) गुसाईंगुण्ड इन का उमादेवी (प्रारि आंगन) इत्यादि इन आश्रमों में गये और कुछ दिनों रहे भी थे, उन दिनों इन स्थानों में साधना करने वाले कतिपय जरूरी महात्मा रहते थे। यह शायद इन्हीं दिनों की बात थी जब कि महात्मा जी को एक विचित्र मनुष्य से एक रात साथ रहने को मजबूर होना

बात इस प्रकार थी -

महात्मा जी अलेक्जेंड्रिया (सिकंदरिया) से वितस्ता (झेलम) की अर्धचंद्राकार धारा के किनारे से चलते नदी को पार करने के लिये पुल को ढूंढ रहे थे और उस पार जाना चाहते थे। शाम का समय था, महीना कार्तिक का था, परन्तु पुल का पता नहीं लगता था। इतने में एक वृद्ध मुसलमान जिस के पैरों में 'पुलहोर' (घास का एक अफलातुन झूला) था, वह महात्मा जी को पार जाने के प्रयास को देख कर बोला, "बाबा जी" पार जाना चाहते हो? चलो मैं भी पार ही जाना चाहता हूँ। वह वृद्ध नदी की धार की ओर से चलता बना और एक दूसरे पेड़ से पुलहोर पर रवाना होकर महात्मा जी को आवाज देकर बुलाने लगा। महात्मा जी ने कहा मैं तो नहीं आसकता हूँ। इतने में वह आदमी पानी में ऊपर से ही चलता हुआ महात्मा जी के पास आकर अपने पुलहोर को खोला नहीं खोला नहीं चलो मैं भी तुम्हारे साथ ही रात को किसी जगह रहूंगा।

फिर दोनों कुछ दूर जाकर एक घर में रात को ठहरे। वृद्ध ने महात्मा जी से कहा बाबा जी, यहाँ भी एक रुपया किराया है इस से कुछ नहीं मिलता। महात्मा जी ने यह घटना मुझे एक प्रसंग में इस के कई वर्षों के बाद बुनाई थी और यह था कश्मीर में मुसलमान भी कई गुना सत्य है।

अब की बार तो महात्मा जी कश्मीर में पूरे १३ महीने रहे थे। और माघ की कठिन सर्दी के दिनों में भी कभी कभी मदन और अन्तरात्मा के घरों में वे रहते थे और लौटते रहते थे। एक बार अन्तरात्मा में कुछ कश्मीरी साधुओं ने उन से आग्रह पूर्वक महाराज जी से कहा कि "आप तो ब्रह्मचारी है, ब्रह्मचारी को तीर्थ धर्मशास्त्र आज्ञा नहीं देता। परन्तु उन्होंने इस की परवाह नहीं की बाद में उन्हें पता लगा गया था कि जिस पंक्ति से एक शास्त्रीय विवाद करते थे वह वास्तव में संस्कृत की उद्धृत निशान है।

उस समय महात्मा जी जम्मू से प्रेरित थी
और स्थानों पर ठहरते ठहरते कश्मीर घाटी
में पहुंचे थे। जम्मू से चलकर अखनूर
होकर कुछ दिन ठहरे थे। वहां से 'रियासी' में
जो कि एक प्रसिद्ध जगह है कुछ
दिन ठहरे थे। वहीं की एक घटना सुनाते थे
कि वह एक 'होटल' में गये। होटल
वाले ने उन्हें अंदर से मेहमान खिलाया,
महात्मा जी ने अंदर से मेहमान रखा है
दो तीन सब्जियां, पुलाव, फल भी थे।
महात्मा जी ने होटलवाले से कहा कि कितने
पैसे हुए। उस ने कहा जितना उसने खाया,
पैसे क्या वह जो मैं ले लूं, कुली तो कुछ
दो पैसे भी नहीं लेते।

महात्मा जी की यह बात उस समय के
संबोधन में प्रसंगवश एक दो बार कही थी।
कहते थे कि वह कहते थे 'बापू जी,
इन बातों को लिखना', मैंने उस समय
इस पर विशेष ध्यान न रखा था, परन्तु
आज यह लिखते समय उन का यह कथन
याद आ रहा है।

कश्मीर में पुनरागमन

सन १९६७ में महाराजजी से फिर मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस समय मैं 'लिशारद' में पढ़ता था शायद प्रथम वर्ष में। मा श्रीनगर में एक रसायनिकखान गौरीशंकर मन्दिर की सर्वोत्तम धर्मशाला में एक कमरे में अकेला रहता था। मार्तण्ड में महाराजजी मेरे मामाजी स्वर्गीय स्व श्रीनन्द लाल के पास छुट्टियों में रहते थे। वहीं से श्रीनगर आये थे। श्रीनगर में मुझे उसी धर्मशाला में मिले थे रहते थे वह 'श्रीकण्ठ नेहरू' के घर। एक दिन प्रातः ही मेरे पास सामान लेकर आगये कुछ क्रोध में थे क्योंकि नेहरू के घर में उन का कुछ अपमान हुआ था इस लिये उन का घर छोड़ दिया था फिर कभी वहाँ नहीं गये। उन दिनों श्रीनगर में शेखसाहेब का एकतन्त्रता संघर्ष चलता था। इस साधारण सी बात पर हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा शुरू हुआ। मेरे आग्रह

श्रीनगर के पुराने अस्पताल में थी। शाम को
समय था महताबजी जैसे शाम को सैर को
जाते थे मैं भी उन के साथ चला। हम लोग
अब अमीराकदल की तरफ चले। कोई मुना
आवाज पर पहुँचे तो थे कि मुसलमानों ने
हमें पकड़ा, जाते भी साथ में हिन्दू
जा रहे थे। मारने लगे, कई मुसलमान
उन्होंने छुरियाँ भी निकाली थी। हम दोनों
अमीराकदल की तरफ भागते गये। कुछ
महताबजी को पता न चला न उन को मेरा।
गिरते उठते खेतों में आपने को बचाता
हुआ मुश्किल अमीराकदल के प्राथमिक बाजार में
पहुँचा, वहाँ महताबजी मुझे मिले, उन को भी
उन्हों ने छोड़ दिया था। फिर हजूरीबाग की पुलिस
चौकी पर हमें कुछ लोग लोगये, क्योंकि
वहाँ पुलिस कुछ पूछताछ करती थी।
हमें वहाँ से छुट्टी मिली, फिर अपने जाने
क्योंकि अमीराकदल से ही सरकार
हमें लगी थी। महताबजी मुझे और
दो तीन हिन्दुओं को

एक जम्मूकाश्मीर डोगरा के पिनाकपर लेनजे जहं उन के परिचित थे। इन सब जहं ही रात को रहे भोजन आदि भी उनके यहीं ही हुआ। प्रातः इसके बाद वहां से चलकर अपने मुकाम पर पहुंचे।

इन दिनों में कई सद्पुरुष महात्मा जी के सम्पर्क में आये. जिन में यहां पर कुछ व्यक्तियों का उल्लेख करना आवश्यक समझता हूं। - यह है -

१ पं पण्डित शीतलाल रैनाजी

यह श्रीनगर में जम्मूकश्मीर राज्य के धर्मार्थ विभाग के एक जिम्मेदार अधिकारी थे। श्रीनगर के रहने वाले सभ्य एवं धार्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे। इन के यहां महात्मा जी श्रीनगर में इन के निवास स्थान पर रहते थे। महात्मा जी का व्यक्तिगत श्रद्धा-पूर्वक आदर करते थे। इन का सारा परिवार महात्मा जी का भक्त था। महात्मा जी की सारी व्यवस्था करते थे। यह दिल्ली में भी

गतवर्षों में भी महात्मा जी से मिलने के
लिये गया था परन्तु वह सब बहुत वृद्ध
थे परन्तु निरन्तर अपने स्वामी जी की
स्मृति और श्रद्धा की भावना से यहां भी
गया था। इनको तो महात्मा जी के आदेश
पर उन के पृथक् और एकान्त में रहने
के लिये श्रीनगर के सारदाता में अर्थात्
धर्मार्थ विभाग के डाक्टर्स ने एक सरकारी मकान
में ठहरने का प्रबन्ध किया था। यह उन
दिनों श्रीनगर से का एक रमणीक एवं
शान्त क्षेत्र था। यहीं पर उनके एक ही
कश्मीरी पण्डित का गृहस्थ था। भोजन की
व्यवस्था पण्डित टीकालाल जी ने इनके
लिये उसी घर में की थी। केवल भोजन
के लिये प्रातः सायं वहां जाते थे और
सरकारी भवन में एकान्तवास करते थे।
मुझे जाकर घर मुझे मेरे आग्रह ही रात को रहो।
मैं गुंडी अहलमद के अपने निवास से
वहीं रात को सोने के लिये आता था।
भोजन का प्रबन्ध था। इसकी जानकारी
मैं -

प्रातःकालीन कक्षाएं ... लगती थीं। मैं
स्कूल से आकर भोजन कर के सदा ही
महात्मा जी के पास पहुंचता था। रात को भी
कभी कभी उन के पास ही रहता था। इन्हीं
दिनों में ने आर्ष आर्षनवग्रन्थ के कुछ
श्लोक दिखाये जो मैं ने अति प्राचीन ग्रन्थ
से (पाण्डुलिपि) नकल किये थे। महात्मा जी
उन को बड़े आश्चर्य पूर्वक पढ़ते थे और
कहते थे यह तो ऐसा लगता है जैसे कि
मेरे ही विचार हैं। अब तक उन्हों ने अरबी
शैवदर्शन आदि का कोई ग्रन्थ नहीं देखा
था। इस के बाद इन की जिज्ञासा बढ़ गई
और उन्हों ने पंडित हीरालाल जी से कहा
कश्मीरी शैवदर्शन के बहुत से ग्रन्थ
को संग्रहीत और पढ़ते रहे। इन में ईश्वर
प्रत्यभिज्ञा, परमार्थसार, तन्त्रालोक मुख्य थे।
जब निरन्तर इन को पढ़ते रहते थे और
ऐसा लगता था जैसे उन को एक विशेष
दिशा का ज्ञान होता था। उन दिनों मुझे भी
उन के गम्भीर ज्ञान

और प्रकाण्ड पाण्डित्य तथा साधनासंपन्नता को
निकटता से समझने का सुअवसर मिला था।
मैं उन दिनों कश्मीरी सिद्धान्तों के साहित्य
और रसतरंगिणी को पढ़ता रहता था और
महात्मा जी को कश्मीर के तांत्रिक सिद्धांतों तथा
और ऐतिहासिक स्थानों की तारीफ करता था
इस विषय में वह पहले से ही पर्याप्त ज्ञान
रखते थे। उन दिनों उन के साथ निरंतर
एक मास तक मैं रात दिन रहा था और
उन्होंने बहुत से रहस्यमय उपदेश दिये थे
जिन का ~~प्रभाव~~ प्रभाव मुझे उन के समीप
और भी अधिक निश्चित गया। अंत में
मैं उन से पृथक् हुआ मुझे बहुत दिनों
तक सूना सा लगता था। महात्मा जी
इस के बाद शारदा देवी के
दर्शन करने के लिये कश्मीर धाम की
पश्चिमोत्तर सीमा की तरफ चले गये थे।

श्री सनीनन्द जी

यह भी श्री टीकालाल जी के घर पर ही महात्मा जी के साथ रहते थे। ये तो पुलिस के व्यक्ति। नौकरी छोड़ दी थी। और 'साधू' बनगये थे। जादुगर थे। महात्मा जी को चमत्कार इन का स्वभाव अच्छा न लगता था तथापि यह सत्य साधु मानकर इन से सद्व्यवहार ही करते थे। एक दिन इन की दुष्टता की सीमा हो गई। महात्मा जी को सुरेन्द्र उपहास पूर्वक मजाक उड़ाने लगे। महात्मा जी श्री टीकालाल जी का घर छोड़कर आगये। श्री सनीनन्द जी से फिर कभी न मिले। उन का अन्त भी बहुत बुरी तरह होगया।

पंडित बलदीनाथ जी

मैं उन दिनों बलदीनाथ जी लिखा करती थी। मैं इन को लेकर पं. टीकालाल जी के घर महात्मा जी का दर्शन करने के लिये गई। उन दिनों भी यह अपने सौरभवन में रहते थे

और सैक्टर पहला प्राइमरी स्कूल खोला।
यह उन के साथ प्रोफेसर बलनिवास
का प्रथम समागम था। मैंने महात्मा जी
के पास आते ही दर्शन किया। जब भी मैं
जाता था। महात्मा जी उन का कुशल समाचार
अत्यन्त जिज्ञासा और उत्सुकता से
पूछते रहते थे। किसी को पता था कि यह
महात्मा जी के इतने निकटतम सम्पर्क
में आकर इन के विशिष्ट सेवक बनेंगे।

श्री भक्तराम याजड़

यह भी महात्मा जी के विशिष्ट
सेवकों में से हैं। मेरे साथ पढ़ते थे और
श्रीनगर के रहनेवाले थे। इन्होंने
श्री जी को कुछ गुप्त महात्माओं का
परिचय दिया था जिस पर श्री जी विशेष
रूप से खोज करने लगे थे। महात्मा जी ने
कहा था कि 'भक्तराम' किसी सिद्धपीठ से
ही आया है। यह अत्यन्त अल्पायु में ही
वर्ष ३५ में कैलासवासी हुए। महात्मा जी
को इस पर बहुत दुःख और पश्चात्ताप
हुआ था जब मैंने इन को कहा था कि भक्तराम
नाथ का स्वर्गवास हुआ।

पुनर्मिलन

सन १९६२ में महात्मा जी का दर्शन और सहवास फिर प्राप्त हुआ। मैं श्रीनगर में 'शारदा' प्रथमवर्ष में पढ़ता था। महात्मा जी 'मार्तण्ड' आये थे। मैंने सुना इसलिये मैं भी श्रीनगर गया। श्रीदीनानाथ रैनाजी के घर ही ठहरे थे। मैं प्रातः जाता ही था। महात्मा जी से मैं प्रायः कश्मीर के अतीत विद्वानों और ऐतिहासिक स्थानों के विषय में चर्चा करता ही रहता था। कुछ तो उन्होंने देखे भी थे। कुछ नहीं। इन में एक दिव्य तीर्थ 'हंसवर्मीश्वरी' नामक तीर्थ था। इस के विषय में 'राजतरङ्गिणी' के प्रारम्भिक कश्मीरवर्णन में लिखा है:—

"देवी भद्राभिरे: शैले
गुह्येनद्रभेद शुचौ स्वयम्भु।
सरोऽन्तर्दृश्यते यत्र,
हंसरूपा सरस्वती ॥"

इस अत्यन्त लघुप्राय सिद्धक्षेत्र को डॉ. स्टीन ने खोजा है और इस का विस्तृत वर्णन लिखा है। यह स्थान कश्मीर में दक्षिण पश्चिमीय पर्वतों में अवस्थित है और कुछ दुर्गम ही है। मैंने जब महात्मा जी से कहा तो उन की भी इच्छा

जिज्ञासा बढ़ गई। श्री टीकालाल जी ने कहा हम इस का प्रबन्ध करा देंगे। यह स्थान कश्मीर के पुलवामा तहसील में 'हाल' ग्राम के समीप है।[1] महात्मा जी के वहाँ कुछ सेवक भी थे जो टीकालाल जी के परिचय के आदमी थे। उन में एक पण्डित दामोदर खान नामक एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। महात्मा इस ग्राम में पहले भी रह चुके थे। यहाँ पर रह कर उन्हों ने अपनी पहली ही 'आत्मविलास'[2] की रचना की थी।

फ्रवरी का महीना था। महात्मा जी के साथ मैं 'पुलवामा' पहुंचा। वहाँ से हम दोनों टांगे पर सवार होकर 'हाल' के लिये रवाना हुए। ग्रीष्म की हरियाली में चारों ओर रमणीय खेतों के बीच में होकर टांगा चला रहा था। साहित्यिक चर्चा हो रही थी। महात्मा जी ने अपने श्रीमुख से अपनी बाल्यकाल की रचना सुनाई। रचना इस प्रकार है:—

ॐ नमो विघ्नविनाशाय हरि शेष पुरन्दरा दिनाम्
एक दन्त मति महतो निपुणाय नमो नमः।

---

१ 'आत्मविलास' में 'हब्बाला' लिखा है

२ इस का वर्णन 'आत्मविलास' के अन्त में है।

वाणी ! तव स्तवविधौ मम बालिशस्य ;
हे नाथ शूकर कथं सफला भवित्री ॥

उनके बोलने का प्रकार और उन की उस समय की शक्तिविह्वलता अवर्णनीय थी। मैंने कहा महात्मा जी, यह तो बहुत मधुर और सुगम पद्य है। वह बोले - 'यही तो प्रसादगुण[1] है।'

हम 'हाते' चार बजे पहुंचे। एक उन की सेविका थी लिम्बा ब्राह्मणी। उसके घर में रहे। पता लगा कि पण्डित 'दामोदरस्वामी' कहीं बाहर गये हुए हैं। उनके लौटने पर ही यात्रा का प्रबन्ध हो सकता है। मैं भी फिर महात्मा जी के साथ ही रहा। यहीं पर वह मुझे 'आत्मविलास' के पद्यों को सुनाते थे और उन का वर्णन दार्शनिक गम्भीरता से भरा होता था। मैंने 'आत्मविलास' की नकल कर के उन को सुलभ आधारों में वृक्ष की नकल दे दी और मूलप्रति[2] उन की आज्ञानुसार उनके पास रखी।

---

१. शीघ्र समझमें आनेवाले और सुबोधशब्दों की रचना को 'प्रसाद' गुण कहते हैं।

2 यह मेरे पास अब भी सुरक्षित है

वहाँ हमें एक ब्राह्मण के पास 'शारदा माहात्म्यम्' देखने को मिला। स्वामीजी ने कहा इस की नकल करो। मैं नकल करने लगा क्योंकि अप्राप्य ग्रन्थ शारदा लिपि में था अतः महात्माजी पढ़ने ही सकते थे। उनके पास इस की प्रति देखने की लालसा से मैं नकल करने लगा। यह महात्मा भी पढ़ते थे। एक दुकान पर नहीं बैठते थे आया कि शारदा सरकारी अंकों को पढ़ती (लीला या सैना) के रूप में दर्शन देती है। एक पढ़ते ही महात्मा जी उछल कर खड़े हो गये। मैंने कहा महात्माजी! क्या बात है? कहो क्यों कहा महात्माजी! क्या बात है? कहो क्यों

तत्क्षण मैं शारदा क्षेत्र गया। मेरे मन में तब से यह भावना हो गई थी कि यहाँ मुझे कुछ विशेष चमत्कार देखने को नहीं मिला। मेरे मन में कुछ शंका सी होगई थी परन्तु अब मुझे इस का समाधान होगया। मैंने कहा अब कौन बाधा है

वह बोले –

'जब मैं शारदापीठ गया था वहाँ भगवती की मूर्ति का दर्शन कर के बाहर किसी शिला पर बैठा था। इतने मेरे सामने एक पेड़ था। मैं उधर देखने लगा, देखता क्या हूँ कि पेड़ पर, तोते का एक जोड़ा बैठा है। मैं गौर से उन की तरफ देखता रहा। कुछ देर बाद वह उड़ गये। इस के बाद मेरे मन में आया कि यहाँ कश्मीर में तोते तो होते ही नहीं यह कहाँ से आये। फिर नहीं के लिखी व्यक्ति से पूछा कि यहाँ तोते भी होते हैं उस ने कहा यहाँ तोते कहाँ। हम ने कभी नहीं देखे। मैं फिर चुपचाप वहाँ से चला आया'। यहाँ आना मेरी शैला दूर होगई। श्रीनाथ जब यह 'माहात्म्य' सुनेगा। इस बात को अवश्य लिखना।

यों ही दस दिन बीतगये। श्रीदामोदर जी ने यात्रा का सारा प्रबन्ध किया। हम

६२ आदमी के दल सुबह की प्रातः
राश लेकर हम पश्चिम की दिशा में चले।
एक नदी पार कर के हमारा
रास्ता एक घाटी में से होकर था। यह
घाटी दोनों तरफ चीड़ और देवदार के
पेड़ों से आच्छादित पर्वतमाला से बनी थी।
बीचों बीच कलकल करती हुई नदी
बहती थी। किसी ने कहा यह नदी
मुंज पहाड़ी से आई है। यह इस
तीर्थ का प्रसिद्ध नाम है। थकान मिटाने
था। रास्ते में हमारे कुछ साथी
सारी रात में पुरानी ~~रस्ते~~ टूटी और
कुछ टूटे हुए मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े
बिखरे पड़े थे। इस से यह प्रतीत होता
था कि पहले बहुत से लोग आते जाते थे।
~~एक~~ घाटी में से ही १२ मील चल कर हमें साफ़ ~~एक~~
एक झीलानुमा पहाड़ी टिरनाड़ि दी दिखा। यही
'भेड़ा गिरि' है। इस के ऊपर एक जलाशय
है इस का जल निर्मल और मीठा
था। यह सर ~~झील~~ अलकनंदा का

किनारों पर

मैं प्राचीन समय के बड़े बड़े तराशे हुए भारी व एवं करीब एक गज चौड़े और एक दो फुट चौड़े पत्थर बिछाये गये थे जो चिकने और घिसे हुए लगते थे। तालाब कीचड़ एवं गिरे हुए वनस्पतियों के टुकड़ों से भरा हुआ था। सरोवर के पश्चिमोत्तर कोने में एक सड़क थी जिस पर कभी शिवलिंग रहा होगा।

हम ने खाना पकाना प्रारम्भ किया इतने में आकाश पर मेघमाला आगई। हमारे साथ कोई टेन्ट नहीं था। यदि वर्षा होती तो बहुत कष्ट होजाता। सब ने मातालाजी की शरण ली। उन्होंने कहा चिन्ता मत करो, वर्षा नहीं होगी मैं वह राग जानती हूँ जिस से मेघ चलेजायेंगे। बादल काले और बरसने को तैयार थे। मेरे मन में सन्देह नहीं की बात नहीं होगी। किन्तु, आश्चर्य! उन्होंने गाना शुरू किया बादल छूटने लगे और प्रकाश धीरे धीरे निर्मल होगया।

रात भजन पूजा और गुरु के गये करते
थी। प्रातःकाल सन्ध्या प्रार्थना वन्दना दि
कर के फारिग होकर हम इधर उधर
सैर करने निकले। बड़ी घर इस सफाई
का मैदान दिखाई दिया जिस में यंत्र
तंत्र प्राचीन समय के मकानों की आधार
शिलाएं और पत्थर तराशे हुए बिखरे
पड़े थे और ~~बेचने के लिये~~ बहुत
सी दिखाई दिये जिन में अक्षरों हिन्दू
पूजा आदि के लिये देवताओं के लिये
प्रसाद है (चावल खीर आदि) अर्पण करते
थे। इस जंगल ही में एक छोटा सा तालाब
है जो सरदेश में शालमर सरोवर से
पश्चिम निकलता रहा। कहते हैं इस बात से
कि शायद महाकवि कालिदास के
जमाने तक यहां जाजीवरी का दर्शन
हो। क्योंकि उन्होंने लिखा है

'यत्रो तर्दृश्यते यत्र
हेस हंसा सरस्वती'

~~यहां~~ अर्थात् जहां सरोवर में
हंसरूपिणी सरस्वती दिखाई देती है।

सन्ध्यादु का भोजन तैयार होगया था हम ने भोजन लिया। सामान बान्ध कर घोड़ों पर लाद लिया और मणकर्ण को प्रणाम कर चलपड़े। सायं ७ बजे करीब 'हाल' पहुंचगये। इस के १ दूसरे दिन मैं श्रीनगर प्रयाग और सहालाजी यहीं रहे। फिर वे भी अमरनाथजी की दर्शन करने जायेंगे।

अमरनाथजी की यात्रा में उन्हें लगभग आठ सप्तम पञ्चरङ्गिणी (पञ्चतरणी) पड़ाव पर रात को रहना पड़ा। वहीं पर प्रभातके समय उन्हें भगवान-शिव और पार्वती के दर्शन युगल यौनमुद्रा में हुए थे। उन्होंने कहा कि आकाश तक लम्बे हुए प्रकाशपुञ्ज रूप से उन्हों ने देखा। उन को केवल ढांचे ही दिखाई दी और अमर तक उन की दृष्टि नहीं पहुंची। इस बात का वर्णन सहाला जी ने मुझे कई वर्षों के बाद लायलपुर (पाकिस्तान) में सुनाया था। ×

※

परशुराम स्तोत्र और परशुराम जयन्ती – मोतिहारी

स्वामी जी ने परशुराम स्तोत्र की रचना की थी। उन्होंने अक्षयतृतीया के दिन जो दिन था भगवान परशुराम का आविर्भाव का दिन माना जाता है – भगवान परशुराम जयन्ती शायद पहली बार मोतिहारी (बिहार) में मनाने का श्रीगणेश किया था। यह शायद सन् १९५३-५४ का समय था। मैं उन दिनों जनसंघ में ही पहला था उत्सव अच्छी तरह धूम धाम से मनाया गया था। इसके कई पहले दिनों तक मोतिहारी के प्रमुख ब्राह्मण याद करते थे। तब तक स्वामी जी का परशुराम स्तोत्र शायद छपा भी नहीं था।

कश्मीर में फिर दर्शन

मेरा वैसे तो महात्मा जी के साथ पत्र व्यवहार चलता ही रहता था। मैं १९३३ में बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी में 'आयुर्वेद' कालेज में पढ़ने गया था। मैं ग्रीष्म अवकाश में घर आता रहता था। १९३४ का ग्रीष्म अवकाश था मुझे महात्मा जी सार्वत्रिक में मिले। अब तक तो उन्हें कश्मीर में सफेद तथा सेबों का काफी बड़ा बगीचा बन चुका था। पण्डित शिव जी फोतेदार उन दिनों 'बारामूला' में नौकरी करते थे। महात्मा जी के साथ मैं भी बारामूला गया मैंने भी वनविभाग से कुछ पौधे (Medicinal Plants) बनारस लाने के लिये लेने संग्रह करने थे। वहाँ महात्मा जी के साथ मैं पण्डित शिव जी के बंगले में रहा। यहीं पर महात्मा जी को कोटीतीर्थ शेलपुरी के पास एक विलक्षण अवधूत के दर्शन से समागम हुआ था। उस को 'चलता बाबा' कहते थे।

महात्मा जी को उन्होंने बहुत सी ऐसी बातें बताई जिस से वह बड़े प्रभावित तथा चकित भी होगये थे। महात्माजी को उन्होंने पूर्वजन्म की भी बहुत बातें बताई जो कि महात्मा जी को विश्वसनीय प्रतीत हुई। उस में कुछ विलक्षण शक्तियों की भी चर्चा आगई थी। महात्मा जी श्रीनगर में ही रहे थे और चक्रमाबाबा से समागम होता रहता था। परन्तु चक्रमाबाबा तो चक्रमा ही दे गये और बारामूला से कहीं गये थे किसी को कुछ पता नहीं लगा। महात्मा जी तो कहते रहते थे कि चक्रमाबाबा बड़े पहुंचे हुए सिद्ध थे।

हरिद्वार में समागम

मुझे महात्माजी ने हरिद्वार से पत्र लिखा था कि बनारस से जल्द गोलबकाश बिताने के लिये कश्मीर जाओ। हरिद्वार में मुझे मिलना। यह सन् दूसरे वर्ष का वर्ष था। मई के ~~अन्तिम~~ सप्ताह में मैं हरिद्वार पहुँचा। महात्माजी वहाँ एक धर्मशाला में ठहरे थे। उनके साथ नोलाजह? का एक सत्तासमनासिक सेवक था। यह शायद वैशाख का पर्व था। हमें धर्मशाला ~~का~~ में स्थान नहीं मिला। सब कमरे भरे हुए थे। हम रात बिताने के लिये स्थान की तलाश करते रहे। परन्तु कहीं जगह नहीं मिली रात के १२ बजने लगे थे। एक चुंगी का बरामदा मिला। वह भी धूल से भरा था। रात को हम वहीं सोये। घूमते घूमते थक गये थे और फिर चलने की शक्ति नहीं रही थी।

सन्तराम जी पुलिस विभाग में नौकरी करते थे। वह पंजाब चले गये थे। महात्मा जी के साथ मैं कुछ दिनों तक हरिद्वार में रहा। दिन को कनखल, चण्डी भगवती का मंदिर जो गंगा जी के उस पार पहाड़ी पर है देखने गये। गंगा जी से जो धारा-कनाल निकाली है वहां पुल पर मैं और महात्मा जी खड़े गंगा जी की धारा को देख रहे थे। बड़े भावावेश में बोले हमतो गंगा जी के तट पर अपना अन्तिम समय बिताना चाहते हैं। फिर जरा बाहर मुख होकर हंसते हुए बोले जो ईश्वर की इच्छा। फिर कहने लगे देखो यह आखरी क्रम है, उस समय भी नाविकों का सारी कथा देते थे प्रभु का लोग। इसी लिये देखो सप्तशती में शुम्भासुर के मारने के बाद निशुम्भ का वर्णन लिखा है

"खरिते मार्गवाहत्य"

अर्थात उस दैत्य के मरने के बाद

नदियाँ भी अपने पूर्णिमाणि से चलने लगी थी।

कनखल में कुछ समय तक रहे। वहाँ स्वामी जी ने गंगालहरी के कुछ पद्य मधुर ध्वनि से पढ़े।

हमें रहने के लिये किसी धर्मशाला में स्थान मिल गया था। उस भीड़ भी कम होगई थी। एक दिन प्रातः गंगा जी के तट पर स्नान करते समय महात्मा जी ने जल में दो रुपये रहते गंगाजल हाथ में लिया। मुझ से कहने लगे 'श्रीनाथ! तुम यह जल लो तो तुम्हारे दारिद्र्य कष्ट दूर होंगे।' मैंने हाथ जोड़ कर कहा नहीं महात्मा जी! मुझे अभाव की कृपया दूर करिये। धन तो दूसरे लोक की चीज है। फिर उन्होंने जल पुनः गंगा जी में ही डाला। मैंने अनुभव किया शायद यह मेरी परीक्षा ही थी। परन्तु वह बार बार फिर कहते

कई प्रसंगों पर कहते रहते थे कि निःस्वार्थ सेवा करनेवाले बहुत कम लोग हैं।

यहीं कनखल पर उनको गंगाजी का दर्शन हुआ था। इस बात का वर्णन कई वर्षों के बाद महात्मा जी ने मुझसे किया था। बात इस तरह थी:—

बकी ऋतु था। स्वामी जी के साथ कुछ और दो तीन व्यक्ति बैठे थे। गंगा जी का पानी और प्रवाह देख रहा था। बकी भी उस समय हो रही थी। इतने में उन्होंने देखा कि बीच धार में कोई नारी तैर रही थी। उस की बालों की लटें पानी के ऊपर फैली हुई थी। कभी वह नारी सिर ऊपर उठाती थी और कभी फिर पानी में गायब हो जाती थी। महात्मा जी ने अपने साथ बैठे हुए व्यक्तियों से कहा देखो। वह औरत इतने तेज धार में तैर रही है। परन्तु उन्हों ने कहा हमें तो नहीं दिखाई देता। उन्होंने

बहुत बार देखना चाहा लेकिन उन्हें कोई नहीं
दिखाई पड़ा। जबकि महात्मा जी देख ही रहे थे।
इस के बाद महात्मा जी इस रहस्य को समझ
गये।

-x-

X

हरिद्वार से महात्मा जी मुझे अपने साथ 'ऋषिकेश' ले गये थे। वहाँ से हम लक्ष्मणझूला गये। वहाँ से गंगा के पार 'गरुड चट्टी' गये। वहाँ स्वामी जी ने कहा कि "यहाँ पर जंगल में 'शिलोदक' मिलता है। इस में कोई भी नदि वस्तु जैसे फलियाँ आदि पानी में पत्थर बन जाते हैं। मैं ने देखा नहीं। महात्मा साधुओं से सुना है।" दिन डूबने लगा था। अतः उस लिंगार को छोड़ भविष्य के लिये छोड़ कर हम फिर लक्ष्मणझूला आगये। गंगा जी के तट पर ही एक कुटिया थी। उसी में रात बितायी। सारी रात महात्माजी ध्यान इन्द्रिय को निरोध कर बाह्यनिष्ठ ज्ञानी भक्तों की चर्चा करते रहे। उनकी की उस शांत को याद कर एक अवर्णनीय आह्लाद का अनुभव होने लगता है।

शिमला में महात्मा जी से फिर मिलना

सन् १९३६ में मेरी ~~नियुक्ति~~ हिन्दू विश्वविद्यालय में कोर्स समाप्त होनेवाला था। तभी मुझे स्वामीजी का पत्र मिला, पत्र लिरवाया हरिद्वार से। सोलनके राजा साहब के साथ हरिद्वार पधारे थे। मुझे लिरवाया कश्मीर जाते समय हरिद्वार में मुझ से मिलो। मेरे पास बहुत सामान था। सो दूधवर्ड्ड बहुत समय से महात्मा जी से नहीं मिला था। दर्शन करने की बड़ी इच्छा थी। मैं सारा सामान लेकर हरिद्वार पहुंचा। जरूरत महात्मा जी एक दिन पहले ही सोलन चले गये थे। मेरे लिये सन्देशा दे गये थे कि सोलन आजाना। मैं हरिद्वार से चलकर प्रातः दसबजे लगभग कालका स्टेशन पर पहुंचा। वहां से निराहार ही टैक्सी में बैठ कर दोढ़ढ़ बजे लगभग एक बजे सोलन पहुंचा। संकेत के अनुसार रात्रों-

साहेब की एक कोठी पर क्योंकि टीसमर
थी। पहुंचा। मन में बड़ी उत्सुकता थी
कि अब महात्माजी के दर्शन होंगे। परन्तु
महात्माजी वहां से शिमला गये थे। सामान
वहीं रखा। दैवयोग से राजासाहब के सैक्रेटरी
भी शिमला जा रहे थे। उनके साथ कार पर
ही बैठा। मगर शिमला पहुंचकर फिर निराश
होना पड़ा क्योंकि महात्माजी वहां भी नहीं थे
वह शिमला से ६- मील दूर 'मशोबरा' में
राजासाहब की नई की कोठी पर रहते
थे। मैंने मन में दृढ़ विचार किया था कि
आज महात्माजी का दर्शन करूंगा तभी
भोजन भी ~~करूंगा~~ करूंगा। समय लगभग
दोपहर का था। मैं पैदल ही मशोबरा
की तरफ चलने लगा। थकित हो गया था।
मैंने अब निश्चित सा होगया था कि
अब महात्मा जी यहीं मिलेंगे ही। परन्तु

महाराजा जी वहाँ नहीं थे। दो नौकरों को राजा साहेब ने महाराजा जी की सेवा में रखे थे वह खाना पका रहे थे। मुझे लिखित हुआ कि स्वामी जी "नरसिंहपुर" में मेला देखने गये हैं। अखाड़ा में बहुत अच्छा था और सुरक्षा दी थी परन्तु मैं अपने संकल्प के अनुसार तुरन्त ही नरसिंहपुर की तरफ चला। इतना सौभाग्य था कि उतरने का सही था। मैं वहाँ से लगभग दो मील दूर रहा होगा। मैं साढ़े ७ बजे वहाँ पहुँचा। मेला लगा हुआ था। मैंने कुछ लोगों से पूछा। पता लगा कि महाराजा जी 'टीका' साहेब [छोटे सामन्त] के साथ नृत्य देख रहे हैं। मैं वहाँ पहुँचा तो कार्यक्रम हो रहा था। पहाड़ी लोगों की भीड़ थी। मैंने देखा महाराजा जी 'टीका' साहेब के साथ कुर्सी पर बैठे थे। बड़ी ही राजसी ठाठ में। वेश भूषा भी वैसी ही थी। दो सिपाही नंगी तलवारों हाथ में लिये हुए ~~खड़े~~ छोटे ~~राजासाहेब~~

टीकासाहेब और महात्माजी के दोनों बगलों में खड़े थे। बहुत सतर्क महात्माजी से मिले हुए को मीता था। मैंने समझा पता नहीं कैसा व्यवहार होगा। अन्दर घुसते की न तो आज्ञा ही थी न मैंने साहस करना उचित ही समझा। परन्तु मिलना तो आवश्यक था। अतः मैं तो पीठ की तरफ से खड़ा था। मैंने एक लंबी सी पतली लकड़ी लेकर उससे उठाकर महात्माजी के पीठ तक पहुँचाकर उनसे उनका ध्यान आकृष्ट किया। उन्होंने पीछे की तरफ देखा। मुझे देखते ही तुरन्त कुर्सी पर से खड़े होगये टीकासाहेब भी खड़े होगये। टीकासाहेब ने मेरी अधिक प्रशंसापूर्वक परिचय देने लगे। फिर कहा टीकासाहेब! मैं आज जारहा हूं आपके तो ये भद्र रात के लिये। परन्तु झटपट मेरे साथ चलपड़े। टीकासाहेब की आग्रह नहीं माना। यह सब मेरे स्वागत में पांच मिन्टों में ही होगया होगा।

हम दोनों वहां से चलकर एक कमरे में बैठाये गये। भोजन करके वहीं एक कमरे में - जो केवल लकड़ी का बना हुआ एक सुन्दर बैठक की तरह लगता था। सारी रात महात्मा जी और हम बातें करते रहे। 'बे' श्री' जी को उस दिन कितनी प्रसन्नता हुई थी मैं सचमुच मन में ही अपने को भाग्यशाली मानने लगा। दूसरे दिन सबेरे ४ बजे उठे और तुरन्त अपनी नित्यक्रिया की। भोजन करके नौकरों को सोलन चलने को कहा। हम उसी दिन साढ़े ५-६ बजे सोलन पहुंचे। सोलन में मैं ठक्कर के साथ २०-दिन रहा। बहुत प्रसन्न जगह थी। हमें भी महात्मा जी राजकुमारी जी के पास ही बिठा कर भोजन कराते थे। माता जी बहुत आदर करती थी। इन दिनों की कई बातें बतलाते थे। महात्मा जी ने यहीं पर 'हरिजन' पत्रिका निकालने की योजना बनाई थी। हम से लेख निरन्तर देते रहने के लिये कहा।

स्वाध्याय पत्रिका निकालने का मुख्य कारण यह था कि 'श्री हरदेवशरण त्रिवेदी' को जो कि ज्योतिषी मुख्यन्यवत्सल जी के अभिन्नमित्र के प्रारंभ में 'कुण्डली' (जन्मपत्र) में सहयोगी के रूप में काम करते थे। उन का पड़ोसियों के साथ झगड़ा हुआ। और वह अब नये स्थान ढूंढ रहे थे। महाला जी के तो वह पहले ही परिचित हो गये थे। उन को अब वह कोलन में ही राजा साहब की छत्रछाया में रखने का प्रयास कर रहे थे। उन को कोई काम भी मिला जाय और उन के ज्योतिष का काम भी चलता रहे इसलिये 'त्रिवेदी' जी को कोलन में ही रहने का विचार बना रहे थे। इसी जगह से 'श्रीस्वाध्याय' पत्रिका को त्रैमासिक क्रम से प्रकाशित करने की सोची जाना बन गई थी। इस दिनों पं. हरदेव जी के वहां नहीं थे तब तो जाने का सामान्य रूप से विचार नहीं हो सकता। मैं तो 'अरुणोदय' आगरा जाने वाला था ही नहीं रहे थे।

लालकुआं [पश्चिमीय पंजाब] में

सन् १९४० में लालकुआं में नौकरी करने लगा था। ~~फरवरी~~ शायद नवम्बर का महीना था और सन् भी वही ४० ही था। मुझे वहां रहते हुए कुछ ही महीने हुए थे। महाशय जी जैसे प्रदेश के अखबार श्री हरदेवशर्मा जी मेरे पास आए। 'श्री स्वाध्याय' के प्रकाशन तथा प्रचार के सम्बन्ध में दो दिन विचार करते रहे। मैंने भी 'लेख' दिया क्योंकि महाशय जी ने ही कहा था "कश्मीरी पण्डितों का संस्कृत साहित्य में योगदान" ऐसा ही कुछ लेख था। श्री स्वाध्याय के प्रथम अंक वर्ष के पहले संस्करण में मुद्रित हुआ था। श्री हरदेव जी दो दिन रहे। फिर चले गए। अतः 'श्री स्वाध्याय' त्रैमासिक के रूप में ही निरन्तर छपता रहा और मैं भी लेख भेजता रहता था। यह पत्र शुरू से ही प्रसिद्ध होने लगा था। परन्तु कुछ वर्षों के बाद ही बन्द हुआ। इस का कारण मुझे पूर्णरूप से पता नहीं।

महात्माजी का 'लोदुलपुर' (पाकिस्तान में)

आगमन

सन १९४३ का शायद नवम्बर मास था। मैं स-अ-ट्रटर्निकुला अक्सुस में से प्रोजेक्टर और सिलिलसिल के जरिये आजीन था। मुझे यह आश्रम गोस्वामी गणेशदत्त जी के द्वारा प्रतिष्ठापित हुआ था रावी की एक बड़ी नहर पर अवस्थित था। अन्तरनिकुला की जरिफारी के अनुसार संस्कृत हिन्दी एवं अंग्रेजी मौखिक शिक्षा दी जाती थी। जटिलों का जैसा शास्त्र और पदार्थविज्ञान का ही कालालरम था। दो सौ के लगभग विद्यार्थी थे। उन को भोजन भी निशुल्क दिया जाता था साथ में एक गोशाला भी थी। मुझे भी कुटीर मिला हुआ था और मैं बड़ा कृत्रावास का भी अधिष्ठाता (सुपरिंटेंडेंट) था। कुछ सरकार से चुपचाप से ~~सेंक्शन~~ सोलिया सब्जियों आदि और भोजन में प्रातः सायं विद्यार्थियों को दी जाती थी। रात को एक एक जार दूध प्रत्येक विद्यार्थी को मिलता था।

~~गांधी जी~~ का मेरा निवास भी उसी लॉज में हुआ था अतः मैं गृहस्थी की तरह सब नहीं रहने लगा था। (अनिश्चित सा था।
~~नवरात्रि~~ नवरात्रि के दिनों के बाद ही महात्मा जी नहीं पधारे। उन को यहीं पर बहुत सब सुख नहीं कि यहां उन को आवश्यकता दूध, शुद्ध भोजन तथा घूमने के लिये नदी का किनारा जैसा. कि उन्हें ~~प्राप्त~~ था चाहिये था- सब सुलभ था। दिन भर हमारी साहित्यिक तथा राजनीतिक चर्चा चलती थी। बीच में कुछ दैनंदिन ~~क्रियाएं~~ क्रियाएं होती थी। महात्मा जी के ~~उपस्थिति~~ रहने से सब दूर होगई।
मुझे प्रातः ही उठ कर गोमूत्र का प्रबन्ध करना पड़ता था क्योंकि महात्मा जी रोज गोमूत्र से चिकित्सा करते थे। रहते रहते महात्मा जी यहां लगभग रहे। ~~बहुत~~ ज्ञान की चर्चा होती थी वह समय याद आता है मालूम पड़ता है वह सत्ययुग का ही समय था इस बात को यहां दिल्ली में भी

~~यहां दिल्ली में~~

महात्मा जी ने कई बार कहा। महात्माजी रात को हम को और हमारी पत्नी को बड़ी विस्मयकारक और आकर्षक साथ बीती हुई कथाएं सुनाते थे। उन्होंने मुझे कहा था कि इन कथाओं पर ~~से~~ आधुनिक नाम देकर एक संग्रहात्मक पुस्तक लिखना। परन्तु यह उन का कथन अभी तक ~~भी~~ क्रियान्वित नहीं हो पाया।

जैसा कि महात्मा जी का स्वभाव था ~~मुझे मिले कि~~ मुझे मिलते ही कहा कि देखो यहां पर मेरा परिचय किसी को नहीं देना। मैं तो किसी से उन की कोई बात नहीं करता था। वहां संस्कृत के कई विद्वान थे जो कि वहां पर अध्यापन करते थे। मुझे पूछते रहते थे परन्तु मैं टालता रहता था। मेरा उन के साथ व्यवहार भी वह देखते थे और वह समझ गये थे कि यह इन के गुरु हैं। मैं संस्कृत की शास्त्री कक्षाओं को भी पढ़ाता था। वह मेरा बहुत सम्मान करते थे। मुझे कहते थे कि ~~मन्नू~~ ~~योग~~ आप के गुरुजी आये हैं। मैं टालता था।

एक दिन मेरा एक अध्यापक जो न्यायाचार्य और व्याकरणाचार्य भी थे। संस्कृत में ही वादविवाद हुआ। कौन जीता? कौन हारा यह तो अलग बात थी परन्तु बातचीत में लड़के भी उस पण्डित जी को पर-हंसते थे। मेरे मन में कुछ संशय रहा। मैंने रात को महात्माजी से बात की हमारी शंका का समाधान होगया मेरा ही पक्ष ठीक था। इतने में दरवाजा खटखटाने लगा दरवाजा खोला तो अध्यापक और कुछ लड़के जो हमारा कथोपकथन सुन रहे थे। अन्दर आगये। फिर महात्माजी स्वयं प्रकट होगये। इन में स्वर्गीय पण्डित जगदीश चन्द्र जी उन दिनों वहीं पढ़ाते थे। महात्माजी के भक्त होगये और महात्माजी को अपने घर फुलरवान (पाकिस्तान) में ले गये। वहीं श्री महात्माजी के कुछ भक्त से सेवक बन गये थे जो आज देहली, मथुरा आदि नगरों में रहते हैं। श्रीकृष्णचन्द्र शास्त्री भी नरसिंहपुर में अध्यापक थे। अब डेहरादून में रहते हैं। यह भी महात्माजी के भक्त बन गये थे।

खालसा कालेज लायलपुर (पाकिस्तान) में महात्मा जी की एक घटना और भी लिखना है। है तो बात वैसे कुछ नहीं परन्तु इस से महात्मा जी को कितना क्रोध कभी कभी आता था इस का आभास लगता है:—

महात्मा जी ने हमारे क्वार्टर के प्रांगन में एक सूखी घर उजाने वाले के लिये डाले थे। उन में उन को एक लालटेन का लैंगेट भी था। उस को नहीं के एक रसोइये ने बहुत लकड़ियां चढ़ाने समय दूसरे स्थान पर लटकाया था उस पर कौए ने बीट कर ली थी। महात्मा जी ने देखा तो बहुत बिगड़ गये उस खाकरी को बुलाया और बहुत डांटा। उसने कुछ कहा होगा इस पर स्वामी जी बहुत क्रोधित हुए। हमारी पत्नी उन के से हाथ जोड़ कर क्षमा मांगने लगी, आदरणीय उमेश लड़के भी कुछ आगे और क्षमा मांगने लगे। वैसे तो वह रसोइया बहुत शरीफ था। परन्तु मुझे कहने लगे इस को अभी निकालो नहीं तो मैं यह स्थान अभी छोड़ दूंगा। मैं बहुत किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। बहुत देर बाद

शान्त होगये। ऐसा क्रोध मैंने उसी दिन महात्मा जी को करते देखा। वे तो आशुतोष ही थे जैसा कि महाकवि कालिदास ने कहा है:—

"उष्णत्वमग्न्यातपसेप्रयोगात्
शैत्यं हिमत्वं सुप्रकृतिर्जलस्य"

अग्नि आग या धूप में रख कर जल भले ही गर्म होजाय परन्तु फिर ठण्डा ही होजाता है। क्योंकि शीतलता जल की अपनी प्रकृति है।

लायलपुर से महात्मा जी और भी कई स्थानों पर घूमते हुए फिर लाहिस हमारे पास आये थे इन में गोजरा, ईसाखेल आदि कुछ मुख्य हैं। यह सब अब पाकिस्तान में चलेगये हैं। इनकी जी को सेवक कोई सेवी जानकर सज्जन था। अबतो वह शायद वहीं कहीं रहते हैं। उन से मिलने के लिये ही महात्मा जी उस तरफ गये थे। ऐसा सुने जाय है।

महात्मा जी
मुजफ्फराबाद [कश्मीर]
में

४६
सन् वर्ष ~~४५~~ में महात्मा जी मुजफ्फरा-
बाद [कश्मीर] में थे यह स्थान तथाकथित
आजाद कश्मीर में है। यहाँ पर उन्होंने
एक ऐसा स्वप्न देखा था जिस से कुछ
उनको स्पष्ट आभास हुआ था कि यहाँ
पर युद्ध संग होगा और हिन्दुओं पर
घोर संकट आयेगा। इस की सूचना
स्वामीजी ने अपने मित्रों को जो कश्मीर
में रहते थे पत्र द्वारा दी थी। मुझे
भी सन् वर्ष ४६ की गर्मियों में मार्तण्ड में
पण्डित शिवजी क्लेतकार ने पत्र दिखाया
था। यद्यपि उस समय पाकिस्तान
सीमाप्रान्तों में उपद्रव शुरू हो गई थी।
थी इस और इस की सत्यता पर
विश्वास करना उचित ही था परन्तु
तो भी इस पर शतप्रतिशत
कौन विश्वास करता। फलतः वर्ष ४७
के भारत विभाजन के बाद
यह सत्य ही प्रमाणित हुआ।

भारत विभाजन के बाद
देहरादून में मिलना

वर्ष ४७ में मैं कश्मीर अपने घर ही आगया मेरे पूज्य पिताजी का स्वर्गवास होगया। मैं अब अपने गांव में ही क्लीनिक खोलकर प्रैक्टिस करने लगा। काम बहुत अच्छा चला। अनेक संकट आये, थे पुत्र पद पर घर महात्मा जी की उपस्थिति का अभाव खटकता था। यद्यपि मैं किसी अन्तः प्रेरणा से यह निश्चित रूप से समझता था कि महात्मा जी कहीं न कहीं प्रत्यक्ष सुरक्षित रूप से होंगे। परन्तु कहां? किस से पूछें? कुछ समझ में नहीं आरहा था। मैं कश्मीर से अपने सम्बन्धियों को स्कूलों में के लिये सन् वर्ष ४६ के जनवरी मैंास में रास्ता खुलने पर सपत्नीक आमृतसर आगया। वहां से कपूरथला तुरन्त चला होता हुआ दिल्ली आगया। परन्तु महात्मा जी कहीं पता न चला और ऐसा कोई परिचित भी नहीं मिला जो महात्मा जी का कुछ पता देता। मेरा एक सहपाठी

जो मेरा अभिन्न मित्र था और एक संपन्न गढ़वाली परिवार का था। उस से मिलने के लिये मैं देहरादून गया। वहां अपने मित्र गंगाप्रसाद डंसवाल के घर सहारनपुर रोड पर गया। परन्तु मेरा मित्र उस इस समय वहां नहीं था। मैं मेरा एक कर्मचारी तारादत्त गैरोला जो लालकुआं में मेरे साथ सर्वेक्षण कार्य में मेरे साथ काम करता था। उस ने मुझे अपने घर आने के लिये जोर किया। वहां घर में ४-५ दिन रहा। तारादत्त मुझे कहने लगा कि डाक्टर जी मुझे एक बात आप से कहनी थी परन्तु कैसे कहूँ? मैंने कहा कौन सी बात है? संकोच क्यों करते हैं? कहो। उसने कहा कहना ही उचित है कहता हूँ। और बोला आप के वह गुरुजी जो आप के पास लालकुआं में रहते थे, वही आजकल विराजमान है। ~~फिर~~ मैंने उन से कहा था. डाक्टर जी का शायद यहां आगमन हो क्यों कि उन का पत्र आया था। उन्होंने मुझ से कहा है कि देखो उन को आज मेरा पता नहीं बताना। ऊल्टा ही कहना।

मैं ने कहा पता है कि वह कहाँ ठहरे हैं,
उन्होंने कहा कि पता तो उन्होंने नहीं बताया
परन्तु वह हमारी दुकान के ~~सामने~~ सामने
से कुछ कभी कभी गुजरते मैंने देखे हैं। एक दिन
फिर दैवयोग से ही महात्माजी पलटनबाजार
में जाते हुए मिले। बड़ा हर्ष होगया।
वह उन दिनों अपने एक सेवक के पास
ठहरे थे। वह स्यालकोट (पंजाब) के रहने वाले
थे और ~~प्रेस~~ प्रेसमैनेजर का काम
करते थे। महात्माजी के अत्यन्त प्रेमी
और सेवक थे मैं भी महात्माजी के
साथ वहाँ एक दो रात रहा था। इस के
बाद मैं उन की आज्ञा लेकर चला ~~आ~~
देहरादून से फिर दिल्ली और बाद में कश्मीर
आगया था। फिर महात्माजी से जब भी
यदा कदा ~~मिलते~~ मिलते थे। ~~प्रबन्ध~~ पुनः
पूर्ववत् सम्पर्क स्थापित होगया था। हाँ
महात्माजी ने मुझे दिल्ली में श्री दे.
गोविन्दजी सिंघ - जो भारतवर्ष के निवासी
थे - से मिलने को कहा था। मैं दिल्ली में
उन से मिला था और उन का भी
पूरा संसर्ग शुरू होने लगा था।

भरतपुर में पुनर्मिलन

यों तो महात्मा जी यायावर वृत्ति के थे। उनका पत्र आने में एकाध बार ही आता था। फलतः उनका स्थायी पता मोतीलालजी मिश्र का भरतपुर बोर्डिंग यही होगया था। मैं कश्मीर से अब दिल्ली आगया था। यहीं पर मुझे पहिले में मूलचन्द खैराती राम अस्पताल में नौकरी मिलगई थी अतएव मैं अब सन् ४० पहिले के आखिरी मास में दिल्ली में ही रहने लगा था। यहीं पता चला कि महात्माजी भरतपुर में विराजमान हैं। मैं दर्शन करने के लिये एक महीने के बाद ही भरतपुर चला गया। महात्माजी उस समय मिश्र जी के घर पर नहीं रहते थे एक पास की ही पहाड़ी पर एक गुफा में साधना करते थे। मिश्र जी कहने लगे कि स्वामी जी पर बड़ी तन्मयता से मैंने कहा मिलिये वहीं चलते हैं। वह और वह मैं दोनों चले गये। महात्माजी ने पहिले समझ कर दरवाजा खोला

शुक्ल की बार महात्माजी बेशक़ूफ़ से कुछ
बच्चे हुए थे। लेकिन उन का उसी प्रकार
था। ब तक्रीबन आठ नौ सालों के बाद
शुक्ल की बार दर्शन हुआ था। उस रात वहीं
मो. मिस्त्री के घर रहे। दूसरे दिन मेरे पास
स्वामी जी दिल्ली आगये थे। मेरे पास सूतक्ल हस्पताल
में ही दो दिन ठहरे थे। मेरी परिवार अभी श्रीनगर
कश्मीर में ही था। मैं अकेला ही रहता था। दिल्ली
स्वामी जी के और भी भक्त बन गये थे। जिन में
श्री अय्यर के पूर्वज्योति निकुंज। सरोजिनी नायडू
निजामुद्दीन दिल्ली नईदिल्ली में रहते थे उन के
घर महात्माजी रहने लगे थे। फिर हिन्दुस्तान
हाउसिंग फैक्टरी बेगमपुरा में भी
की. डी. कनक्सीसाहेब के यहाँ रहते थे।
श्री अमलीशंकर त्रिवेदी भी उनदिनों मोती
बाग में रहते थे। इन सब भक्तों के
पास ३ ४ भी यदा कदा रहते थे।
कुछ समय श्रीनिवासपुरी में रहनेवाले
नित्यानन्द जी के घर पर रहते थे।
इस जगह

*

मानसरोवर गाड़िन दिल्ली में उनके ~~सब~~ बहुत
भाई के. के. आनन्द साहेब रहते थे। उनके
घर पर महात्मा जी बहुत दिनों तक रहते थे।
मैं उन दिनों तिब्बिया कालेज में रहता था
फिर ~~P~~ हरिनगर में रहने लगा था।
महात्मा जी इन दोनों जगहों पर मानसरोवर
गाड़िन से मिलने आते थे और मैं भी
जाता रहता था। १९६७ के ~~कार्तिक~~
के महीने में भी यहीं रहते थे और मैं
उनकी आज्ञा लेने मानसरोवर गाड़िन
आया था। महात्मा जी ने पूरी सहमति
मेरे 'मथुरा' जाने के लिये प्रकट
नहीं की। मुझे मथुरा में श्रीकृष्णजन्मभूमि
में ~~आयुर्वेदालय~~ वैद्यनाथ आयुर्वेद का शाखा
के प्रतिष्ठापक स्वर्गीय श्री जमनाराधव
शर्मा जी ने अपने नये खोले हुए
आयुर्वेद अनुसन्धान केन्द्र में आने के लिये
अनुरोध किया था इसी सम्बन्ध में। मैं
महात्मा जी से वहां ~~मिलने~~ उस समय
मिलने आया था।

श्री बाबूलाल जी सपरिवार उन दिनों श्री विनोबा
पुरी में रहते थे। मैं प्रभावती महात्माजी के
दिल्ली में बहुत से भक्त और सेवकों का सम्पर्क
सा छूट गया था। जब कभी महात्माजी पंजाब
का दौरा करते थे दिल्ली में कांग्रेस आते थे
और आते ही उन सब भक्तों को सूचित करते थे।
फिर तो सभी श्रद्धालु उनके पास दर्शन
करने ही रहते थे।

जब महात्माजी रो पड़े थे

सन १९४८ के सितम्बर का महीना था
भारत और पाकिस्तान का युद्ध चल रहा था।
हमारा लड़का अश्विनी कुमार जो उन दिनों
देहली की ही था और दूसरी श्रेणी में
पास के हाईस्कूल में पढ़ता था - शाम
शाम को घर नहीं आया। हम ने हर
जगह तलाश किया परन्तु कुछ पता न चला
बाद में हम ने समझा कि उस का अपहरण
किया गया होगा। थाने पास के बाजपत नगर
थाने में भी रिपोर्ट की। महात्माजी
उन दिनों श्री निवासपुरी में रहते थे।
रोज हमारे पास शाम को आते थे।

हमारे परिवार वालों का बहुत बुरा हाल था।
हर वक्त बेटे का नाम होता था तेरी
हम सब को भी छोड़ कर चले ही रहते थे।
जब महिला जी आते और उन को बताया
कि तो बालक की तरह रोने लगे। अधिकतर मैं
उन को कभी भी अकेले या बाथ में भी रोते नहीं
देखना है। हमें सान्त्वना देते थे।
प्रातः फिर आके कहने लगे चिन्ता मत करो
आजायेंगे। प्रायः दिन तक महिला जी दिन में
दो-दो बार अमृतसर पुरी से हमारे पास
आते थे। कहते थे अभी तक नहीं आया। मैं जब
ध्यान में बैठता हूँ मुझे तो लगता है आ रहा
है। मुझे इस से हौसला तो होजाता था
परन्तु उधर दिन बीत रहे थे कहीं से कुछ
पता नहीं चलता था। प्रायः दिन के बाद ऐसा
कि उन्होंने कहा था सोमवार को जरूर आयेगा
ठीक उसी दिन वह घर ढूंढते ही आगया।
बाद में उस के निवरण से इस बात का सबूत मिला
पता चला कि वह अस्पताल ले जाया गया था।
मुझे महिला जी का वह रोना और उन की
वह तड़पन जब जब याद आती है मन
में उन की वह दुःखभरना मेरे अन्तस्तल
को अब भी कुछ हुई सी प्रतीत होती थी।

उन जैसे वीतराग ज्ञानी महात्मा का इस प्रकार रोना और उन का रोना श्रीनिवासपुरी से मेरे क्वार्टर मूलचन्द हास्पिटल तक दो-दो बार सुनना मैं या हमारा परिवार कभी नहीं भूल सकता। यह उन के आशीर्वाद और भजन का ही प्रभाव था जो बच्चे जैसे दूर शहर से सुबोध केवल इक्कीसी अवस्था वाला बालक स्वयं सकुशल घर पहुँचा। और यह भी उस समय में जब रात को ब्लैक आउट होता था और दिन को भी कई रंग का वातावरण बनता जाता था।

जहाँ जहाँ महात्माजी को विशेष चमत्कार देखने को मिले:-

प्रद्युम्न (शारिका) वर्मा श्रीनगर कश्मीर -

यह घटना सन् ७ वर्ष ३० से वर्ष ३२ के बीच की होगी। महात्माजी ने कहा वह मेरे शारिकादेवी के आंगन में - जिसको 'देवी-आंगन' के नाम से कहा जाता है - एक दिन सायं भजन कर रहे थे। एक पण्डित - जो तेज की ओर कश्मीरी वेशभूषा में था - वहाँ आया। और महात्मा जी को देखता रहा। फिर सामने आकर पूछने लगा "बाबा जी 'मय्याकुण्ड सिनी' का पद्य सुनाओ [माया कुण्ड सिनी' इलाहाबाद के 'प्रयाग' के लाघुस्तव का है और प्रायः कश्मीरी पण्डितों की मृत्यु होती है, भी इस को 'अमरनी उनरिवे बोलती थी] महात्मा जी ने सुनाया। आगन्तुक ने कहा आधा भी सुनाओ महात्मा जी ने सुनाया। फिर उन्होंने भी इस पर कुछ अर्थ की व्याख्या की। महात्मा जी बड़े प्रभावित हुए। आगन्तुक ने कहा आप चला मेरे निवास स्थान

पर आजाना नहीं बातें करेंगे। उन्होंने पता भी बताया। दूसरे दिन महात्माजी १२ बजे ही उस संकेतित स्थान पर [हवाकल] पहुंचे। दरवाजा खुला हुआ। महात्माजी सीढ़ियां चढ़कर ऊपर एक सुसज्जित कमरे में पहुंचे। वह पण्डितजी वहीं विराजमान थे। महात्माजी उन के वार्तालाप में लीन रहे और उन्हें बहुत सी शंकाओं का समाधान हुआ। उस पण्डितजी ने बारबार कहा मैंने तुम्हारे ही लिये भेजा जरूर है। परन्तु महात्माजी इस का रहस्यमय संकेत नहीं समझे। पण्डितजी ने कहा अब शाम होजाई है जाइये। महात्माजी चलने लगे और कहा श्रीमान जी मैं कल फिर इसी समय आऊंगा। पण्डितजी कुछ नहीं बोले। दूसरे दिन महात्माजी उसी समय वहां पहुंचे परन्तु वह दरवाजा बन्द था और ऐसा लगता था जैसे कई वर्षों से यह बन्द ही है। महात्माजी इधर उधर देखने लगे कि कहीं यह और जगह तो

नहीं। परन्तु जगह वही थी। महात्माजी ने उसी मकान के सामने वाले घर में आवाज दी। वहां से एक आदमी निकला। महात्माजी ने कहा क्यों जी। इस मकान में डोंगरीजी रहते है वह कहां गये है? उस आदमी ने हैरान होकर कहा यह तो कई सालों से बन्द ही पड़ा है आप किस की बात कह रहे है। यह तो २० वर्षों से बन्द ही है। इस मकान का वारिस तो अब कलकत्ता में रहता है। महात्माजी बड़े किंकर्तव्यविमूढ़ होगये और उन्हों ने फिर कलकत्ते की बातें जो उस डिप्टी कमिश्नर के साथ हुई थी मन में याद की और उस का रहस्य समझने लगे।

कोटी तीर्थ धर्मशाला में (शैलपुरी में)

यहां पर महात्माजी को एक प्रकार से आत्मसाक्षात्कार या ज्ञानोदय हुआ था उन्होंने जैसे कि सारी रात वे अपने आप में ही विचार के दर्शन किये थे, नहीं और उन्हें यह भी प्रतीत नहीं हुआ कि रात कैसे व बीती।

इसका इस का वर्णन यहां क्या करते
यह तो अनिर्वचनीय आवश्यक थी। जैसे श्रीमद्भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय में

"आश्चर्यवत् पश्यति कश्चिदेनम्"

इत्यादि पद्य से इस की अनिर्वचनीयता को भगवान् ने कहा है।

पञ्चतरणी अमरनाथ कश्मीर में

जैसा कि पहले लिख चुके हैं यहां पर महात्माजी को आश्चर्य यौनमुद्रा में शिलामूर्ति का दर्शन मध्यरात्रि काल में हुआ था। स्वामी जी टेन्ट के बाहिर लघुशंका करने निकलने पे उन्हें यह दृश्य देखा। यह खड़े खड़े ही देखते रहे जब तक प्रभात का समय होने लगा था।

साधुगंगा आश्रम कश्मीर में

यह स्थान कश्मीर के पश्चिमोत्तर प्रान्त में अवस्थित था। उन दिनों प्रकृति विभाजन के दृश्य व पहले कई साधुमहात्मा उतरे करते थे। यहां पर महात्माजी को कई दिव्य और सिद्ध महापुरुष

दिखाई दिये थे। किस से कहा जाते
हुई थी यह उन्होंने नहीं कहा या मैंने ही
नहीं पूछा यह अब याद नहीं।

मथुरा में समागम

मैं सन् १९४९ से सन् १९६७ तक
मैं मथुरा में था - मैं श्रीकृष्ण जन्मस्थान
के कुछ ट्रस्ट के अन्तर्गत जैसवाल कॉलेज द्वारा
संचालित आयुर्वेदिक औषधालय में
था। श्री जी यहां इन आठ वर्षों में
प्रायः दिल्ली का सफर आते जाते रहते
थे और मथुरा में भी कई दिन ठहरते
थे एक बार तो लगातार एक मास तक
सर्दियों में रहे थे और फिर दो
तीन बार गर्मियों में भी १०-१५ दिन रहे थे
थे। खूब हमारी बातें चलती थी। परन्तु
अब तो महात्मा जी का स्वास्थ्य ठीक
नहीं रहता था। मैं ने कई बार इन से

अनुरोध किया था कि आप अब यह घूमते रहने का व्यापार छोड़ दीजिये ऐसी भागदौड़ी परिस्थिति में रहना आपके स्वास्थ्य को और भी कमजोर करेगा। कई बार तो मैं ऑब्सर्वेशन से उन्हें सरोष भी कहता था। वह चुप रहते थे। किन्तु मेरा विचार है कि वह आत्मसर्वेक्षी में जीवन करीब दसवर्ष तक ~~घूमते घूमते~~ दिल्ली में ही रहे यह शायद मेरी सम्मति को उन्होंने समझलिया था।

मथुरा में वह 'भूतेश्वर' के दर्शन करने रोज जाते थे। 'महानिधा' के मन्दिर में भी जाते रहते थे।

'श्री' जी के कुछ पद्य - (फुटकर) अर्थात् कि
(यह उन के मुख से मैंने सुने हैं
जो मुझे याद हैं)

कासार प्रति :-

हे रे ! कासार ! मुधा विषादमसितं
मा मानसं त्वं कुरु ।
पद्मोद्घातं युतं वहसि कुणपो ध्यायन् सदैव हृषि;
पृथ्वीपाल-वधू विलेप्य मनो हारीणि ते नारिणि,
जायन्ते कमलानि यत्र मधुपव्रातैः सुरक्तं शीयते ॥

शिवं प्रति

सहृदय शिवेयातं मानसंस्था कदाऽपि
प्रकृति-मधुरवक्त्रं कृष्णगोदेहं निरीक्ष्य ।
विलसति मधुमासे मानसे मोदयन्तो
धवललनुलजाः किं सौरव्यमुल्लाटयेयुः ॥

चन्द्रोदय निषेधे (मित्रं प्रति)

तृतीयाया कीश्वर तुहिन किरणं -
नीक्षय कियति,
प्रदोषे सोल्लासं सवयसमधोलाच
रसिकः ।
अये मैषालेखा विलसति च बिम्बं
न शशिनो,
नु मन्ये कामिन्याः प्रसृति निधृतः
कदुक इति ॥

समस्यापूर्ति कृते (अकस्मात् स्वं भगनतो वर्णनम्
कदा भामा भालोपवयन कृदाभाति रहसि,
सुदामानं कामं पुनरपि कदाभाति मधुवन
कदा सिन्धोः पश्यन् बहुल सुधांशा हतुलहः
मुदा क्षीरावर्त्तां निहरति सदा यदुपति ।

मलयानिल निषेधे

चिरश्लिष्टो दूरादहमुपगतो 'हन्त'
मलयात् -
तदेनां त्वदुच्छेद सुखरिव परिम्लानि मनीं

~~समीरेणोद्भूतैः~~

समीरेणोद्भूतैः नवकुसुमिता चूतलतिका,
धुन्वाना मूर्धानं नहि नहि नहीत्येव कुरुते ॥

राजवंती प्रति निवेदयेत्यालापनम्

अयि मां लव शनि सामिनि
शरणे के करवाणि सप्रतम् ।
कथयेति न हि कोऽपि दक्षिते,
वसुधायां शरणो मनागपि ॥

सब लोकल-गोचरा न किं
सकलेऽपि मम दुर्दशा स्थिते ।
समलङ्कुरु संगतेन मां
समलं मां किमु शैकते सुतम् ॥

अश्वधाटी वृत्तम्

इस वृत्त का निर्माण श्री 'जी ने
और एक कवि पद्य भगवान राम की वंदना
में लिखे थे । मुझे तो इस का केवल
एक ही चरण याद है जो इस प्रकार है:

'श्रीरामचन्द्र मदमाराधये
मनसि धारा धुरात्मलघुसम्'